ओ३म्

सूचीपत्र ।

—:0:—

उससमय में रानीके शरीर में तोपका गोला आकर लगा और वह जगत् में अपनी वीरता का अपूर्व दृष्टान्त और आत्मोत्सर्ग का ज्वलन्त उदाहरण छोड़ कर स्वर्गलोक को सिधार गई। मेवाड़ की ऐसी २ शूरवीर और सती पतिव्रता रानियों के कारण मेवाड़ को और भी यश प्राप्त हुआ है।

प्रभावती।

यह सती गन्नौर के राजा की रानी थी। रूप लावण्य और गुणों में अत्यन्त प्रसिद्ध थी इस की सुन्दरता पर लुब्ध होकर एक यवन बादशाह ने गन्नौर पर चढ़ाई की यह समाचार पाकर रानी बड़ी वीरता के साथ लड़ी। जब बहुत से वीर सैनिक मारे गये और सेना थोड़ी

ओ३म्

वीर और विदुषी स्त्रियां

द्वितीय भाग

सरस्वती.

सरस्वती ब्रह्मा की पुत्री थी। इसका माता का नाम सावित्री था। यह अत्यन्त सुन्दरी और गुणवती थी, जिस मनुष्य को वैदिक ऋषियों ने सब से पहिले श्रुति की शिक्षा दी थी यह ब्रह्मा था उस ने उस वि

की शिक्षा अपनी सन्तान को दी, सनक सनन्दन, सनत्कुमारादि, इसके पुत्र थे, इन पुत्रों के साथ में ब्रह्मा ने सरस्वती को भी वेदों की शिक्षा दी थी जहां ऋषि अनेक विद्या से गुण युक्त होकर अपने आयु को पूर्णानन्द में व्यतीत करने लगे वहां सरस्वती ने भी अपने तीव्र और विलक्षण बुद्धि के कारण वह विद्याध्ययन किया कि जो वास्तव में उसके आयु को पूर्णानन्द कर ने में किसी प्रकार कम न था और सरस्वती साक्षात् अर्थात् सर्व विद्या की देवी कहलाने लगी यह गान विद्या में बड़ी निपुण थी, यह हाथ में दो तारा लिये हुये ईश्वर के भक्ति युक्त प्रेम में मग्न होकर ऐसे राग गाया करती थी, जिसको सुनकर मनुष्य मात्र ही नहीं वरन् बनस्थादि भी विद्या की नि

पुणता का प्रमाण देते थे इसने अपनी तीव्र बुद्धि से इस संसार में अनेक विद्याओं का प्रचार किया। "संगीतशास्त्र" जिससे छन्दादि के पठन पाठन और गाने की रीतियां ज्ञात होती हैं इसीही देवी की स्वाभाविक बिलक्षण बुद्धिके बिचारका फल है। निःसंदेह श्रुति पहिले से थी बरन संस्कृत की वह भाषा जो पौराण सूत्रादि में पहले ब्राह्मणों में मिलती है उसको करने वाली और उसके नियमों को बनानेवाली यही देवी थी। सभा में वार्तालाप की प्रचारक यही देवी थी, गणित विद्या को भी इसी सब गुणयुक्त देवी के तीक्ष्ण विचार और परिश्रम वृक्ष रूपी का फल बताते हैं। मूल अक्षर और व्यंजनादि इसी ने बनाये थे तात्पर्य्य यह कि इस देवी के सर्व विद्या युक्त

आचरणों की संसार में इतनी प्रतिष्ठा होने लगी उसका नामही "सरस्वती" सर्व विद्या का आधार बन गया।

सरस्वती—अत्यंत प्रतिष्ठित और पूजनीय देवी थी उस समय जब प्रायः ऋषि संतान सुयोग्य और सुशिक्षित हुआ करते थे। उस के सुयोग्य कोई बर नहीं मिला। उसने अपनी आयु पर्य्यन्त ब्रह्मचर्य अवस्था में व्यतीत करदी और सदैव विद्याध्ययन और सुनीति युक्त शिक्षाओं को अपने जीवन के आन्दोलन का मुख्य कारण समझा था।

ब्रह्मा से लेकर जैमिन के समय तक इस प्रतिष्ठित देवी के प्रकाशित और सुशिक्षित किये हुये विद्या का प्रचार उस देशमें होता रहा 'सरस्वती' के तात्पर्य को सब लोग भली

भांति समझते थे उस के पठन पाठन के नियत किये हुये नियमों को उल्लंघन नहीं करते थे किन्तु आज कुछ ऐसी दशा होगई है कि हम वास्तविक आशय को भूल कर उस पूजनीय देवी की दर्शनार्थ प्रतिष्ठा तो अवश्य करते हैं वरन् उसके आशय नियमों का कदापि पालन नहीं करते।

दिवाली का दिन इसी गुणवती देवी के स्मरण करने का दिन था उस दिन सरस्वती की पूजामें बालकों को विद्या का आरम्भ कराया जाता था। लोग कार्य प्रबन्ध के लेखा जोखा का नवीन हिसाब खोलते थे। उस समय से विद्या सीखने की दृढ़ प्रतिज्ञा करते थे, और इसी भांति उसकी वास्तविक प्रतिष्ठा करते हुए अपने आचरणों को सुधारते थे वरन् बड़े से-

दका विषय है कि जो दिन विद्याके गूढ़ आशय पर व्याख्या करने के लिये नियत था अब वह व्यर्थ घूमने फिरने और मिठाइयां मोल लेनेका दिनहै और जिस रातको लोग जाकर प्रशंसनीय देवीके स्मरणार्थ विद्या सम्बन्धी शास्त्रार्थ करते थे वह रात अब जुवारियों की रात कही जाती है उस रातको पांसा जगाया जाता है जुवे में सहस्रों के वारे न्यारे होते हैं। कितनों के घर उजड़ते हैं कितनी बेचारी स्त्रियों के नाक की नथ तक उतार कर दांव पर रक्खी जाती है। कितनेही बेचारे बच्चों की रोटियां उस रात को छीनी जाती हैं। बड़े २ घरों में चोरियां होती हैं धोखे से काम लिया जाता है यार उस पर समस्त हिन्दुओं को इतना उत्साह होता है कि उस दिन जागरण करके सारस्वती का स्मरण और पूजन किया जाता है।

हमारी दशा भी कुछ और ही होगई है जो दिन हमारे विद्यारम्भ और उन्नति का कहा जाता है और जिस दिन पवित्र माता के नाम से हम अपने उन्नति करने का उत्साह करते थे अब वही दिन हमारे नाश विनाश करदेने और अविद्यादि दोष फैलाने का दिन होगया यदि सरस्वती इन कार्यों का अवलोकन करती जो उसके स्मरणार्थ किये जाते हैं तो उसको कितना दुःख होता हम वास्तव में ऐसे नासमझ होगये हैं कि किसी कार्य के मुख्य आशय पर कदापि ध्यान नहीं देते और न उसके समझने का यथावत प्रयत्न करते हैं हमारे जातीय नियम और देश प्रचलित रीतियां इस की अपेक्षा कि वह हमको सुख आनन्द और लाभ का सम्पादक बनावें हमको उन्नति के द्वार तक पहुंचावें नित्य प्रति

हमारे दुःख और शोक का कारण होरही हैं और जो हमारे जाति विशेष के सुधारने और दृढ़ करने के यन्त्र थे अब उन्हीं से हमारे जाति के विनष्ट करने का यथावत् प्रयत्न किया जाता है।

सरस्वती के नामसे एक नदी भी प्रसिद्ध है, सम्भव है किसी समय में उसके किनारे वेद विद्याके सिखाने का आश्रम रहा होगा और जहां ऋषि मुनि एकत्रित होकर मीठे स्वर से वेदध्वनि किया करते थे और इस वेदमातिस्थ आश्रम से निकल कर देश के प्रत्येक भागों में वेद मन्त्रों का उपदेश करते थे वास्तव में वह एक पवित्र स्थान था जहां से स्वच्छ विचार और मनुष्यों के कर्म धर्म के सुधार ने उनको पवित्र और स्वच्छ विचारों पर स्थिर रखने का प्रबन्ध किया जाता था अब आज दिन उसी

नदीकी इस भांति प्रतिष्ठा होती है कि केवल सरस्वती में स्नान करनाही मोक्ष का एक मुख्य कारण समझा जाता है जो तीर्थआश्रम हमारे पठन पाठन और उन्नति के शिखर पर पहुंचाने के महान् गौरवकारी स्थान माने जाते थे अब हमारे दुर्भाग्य वश वही अनेक दोषोपाधियों के मुख्य स्थान बन गये न तो कहीं उपदेश होता है न कहीं कथा होती है न पाठशालायें हैं न विद्यालय। यदि हमारे स्वदेश स्थित भ्रातृगण सरस्वती के स्नान के वास्तविक महात्म्य को समझते तो दृढ़ता से आशा थी वे शीघ्रही पवित्र आत्मा होकर परम पदको प्राप्त कर लेते।

चाहे जो कुछ हो उस माता का नाम अब भी हमको सच्चाई पर चलने की राह बतला रहा है। और आशा की जाती है कि आर्य संतान

किसी समय अपनी माता सरस्वती के सच्चे मातृभक्ति युक्त पुत्र कहलाने के योग्य होजायेंगे और उसके नामकी यथावत् प्रतिष्ठा और पूजा करते हुए समय को फेर लावेंगे। जब चारों ओर वेदपाठ की सुरीली ध्वनि सुनाई देगी, हर जगह विद्या का प्रचार होगा और हम अपने घरों में सरस्वती की जगह अपनी माता और बहिनों को उन आवश्यक नियमों को पालन करते हुए देखेंगे। उनके गोद के खेलते हुए बच्चे जाति और देश को उन्नति के ऊंचे शिखपर पहुंचाते हुए भारत को वास्तव में स्वर्ग धाम बनावेंगे।

सरस्वती देवी तू धन्य है। यदि हम तेरे नाम की प्रतिष्ठा करना जानते और स्वच्छाचित्त होकर तेरी भक्ति करते, यदि हम तेरी पूजा करते तो भारत को यह दिन कदापि न देखना

पड़ता ईश्वर करे तेरा नाम हमारे भूले हुए भाइयों को सचाई की राह पर लाये। तेरी ऐसी सुबुद्धि युक्त मातायें हमारे देश में उत्पन्न हों और तेरी भांति हमको सचाई और सत्य विद्या की शिक्षा दें देवी तू धन्य थी! तेरा पराक्रम तेरा उत्साह धन्य था। यह सब दुःख हम को केवल तेरे न होने के कारण प्राप्त हो रहे हैं।

पन्ना।

सौ वर्ष के लगभग व्यतीत होते हैं जब कि होलकर की सेना राजपूताने में बड़ी ऊधम मचा रही थी सांगानेर के निकट ग्राम में एक मध्यम श्रेणी का कछवाह रहता था कछवाहे राजपूतों में दुर्बल और आलसी समझे जाते हैं। और

जैसिंह सवाई के समय को छोड़कर उन्होंने सच मुच कोई प्रशंसनीय कार्य भी नहीं किया था। परन्तु फिर भी वह राजपूत हैं और इस ग्राम के कछवाहे को जिसका नाम दलथम्भनसिंह था अपने बल; पौरुष और साहस पर बड़ा अभिमान था और आस पास के राजपूत उसको अपना सरदार समझते थे। उसकी स्त्री पन्ना बड़ी सुकुमारी अधीनचित्त और कोमल हृदय की स्त्री थी। दलथम्भनसिंह उसको कभी२ ताना देता था। देखना तुमको कहीं हवा न उड़ा ले जाय।

एक दिन राजपूत अपने एक मित्र के साथ बैठा हुआ अफीम घोल रहा था पन्ना अपने पांच वर्ष के बच्चे को गोद में लेकर उनके पास से निकली उसके सौन्दर्य्य को देखकर उसका साथी बड़ा आश्चर्य से उसको शिर से पांव तक

देखने लगा। दलथम्भनसिंह ने हंसकर कहा क्या देखते हो इस में यदि राजपूत स्त्रियों कासा साहस होता तो संसार मे एकही स्त्री थी। परन्तु सुशील, गुणवती औ लज्जावती होने के कारण यह मुझे प्राण से भी प्यारी है, पन्ना अपने पति की बातों को सूनकर मुसकराती हुई चली गई। राजपूत साथी ने कहा 'तुम जानते नहीं हो' इस की चेष्टा से प्रतीत होता है कि यह बड़ी साहसी और वीर स्त्री है।

वीरता! वाह वीरता की तो इस में छूताई तक नहीं है पत्ते का खड़कना सुनकर इसका जी धड़कने लगता है परन्तु तुम ने मुझ से किसी समय कहा था कि वह गोली चलाना जानती है।

हां यह सच है, यह केवल उसका स्वभाव है

इसका बाप बड़ा सिपाही था परन्तु अब तो बहुत दिनों से उसने बन्दूक को हाथ तक नहीं लगाया वह जन्तुओं का शब्द सुनकर कांप उठती है वह कीड़े मकोड़ों की जान लेना भी हत्या समझती है।

परन्तु क्या अवसर पड़ने पर भी वह आगा पीछा कर सकेगी दलथम्भनसिंह हँस कर कहने लगा वाह तुमने अवसर की एक ही कही भय के समय इस की घिग्घी बँध जाती है। इतनी लज्जावती है कि किसी स्त्री से प्रायः बात चीत नहीं करती परन्तु कुछ परवाह नहीं मैं प्रत्येक समय उस के साथ रहकर उसकी आज्ञा पूर्ण करता हूं। साथी ने कहा "तुम नहीं जानते ऐसे स्वभाव वाले अवसर पड़ने पर बड़ा काम करते हैं हम तुम से नहीं हो सक्ता।

इस बात चीत होने के दो दिन पीछे ऐसा समय आया कि जब पन्ना घर के काम काज में लगी हुई थी, उसका पांच वर्ष का बालक अवसर पाकर खेलने के लिये घर से बाहर निकला और अकेले घूमते फिरते पहाड़ी मार्ग में राह भूल गया। घंटे दो घंटे के पीछे माता को अपने बालक के खो जाने की सूचना मिली 'मेरा भैया' ! कहती हुई वह घर से बाहर आई। दलथम्भन से पूछा 'बच्चा कहां है ? वह क्या जानता था। माता को बड़ा दुःख हुआ। दलथम्भनसिंह इस को एक सामान्य बात समझ था। वह बराबर हँसता रहा वह क्या जानता था, लड़का गुम होगया है। इस ने समझा कहीं खेल रहा होगा, थोड़ी देर में आ जावेगा, यह अपनी स्त्री के स्वभाव

पर प्रायः हँसी करता था । साथी से कहा 'देखो यह वह स्त्री है जिस के विषय में तुम कहते' 'अवसर पड़ने पर वीरता दिखलावेगी पहरों होगये बच्चे का कहीं पता ठिकाना नहीं अब तो कछवाहे का हृदय कांप उठा कलेजा धड़कने लगा इधर उधर खोज लगाने के लिये नौकर चाकर छूट पड़े । दलथम्भनसिंह उस का साथी और पन्ना ढूंढते २ पहाड़ी के किनारे जा पहुंची एक चरवाहे ने कहा 'तीन पहर हुए छोटे बालक को मैंने देखा था । खोजने वाले उसका नाम ले लेकर पुकारने लगे परंतु सिवाय चिल्लाने के कुछ हाथ न आया । पांव के चिन्ह रेत और मिट्टी पर बने थे उस समय पांव के चिन्ह को देख कर खोज लगाने की सगम रीति थी। यह सब उसी चिन्ह को देखते

देखते आगे चले अब कुछ २ विश्वास होगया था कि अब छोटे बच्चे का मिलना कठिन है। क्या जाने किसी वनचर जन्तु ने उसे मार डाला हो।

बात यह हुई, बालक राह भूल कर इधर उधर भटकता रहा बहुत समय व्यतीत हो जाने पर वह भूख प्यास से व्याकुल होकर रो पीट कर एक वृक्ष के नीचे अचेत पड़कर सो रहा था और यही कारण था कि उसने उस की पुकार को नहीं सुना।

जब तीनों आदमी उस वृक्ष के निकट प-हुंचे उनकी दृष्टि सोने वाले पर पड़ी। माता का दिल खुशी से उछल पड़ा 'भैया वह सो रहा है', और वह सब उसी ओर चले। पृथ्वी ऊंची नीची थी। पांव बिछलाने का भय था। बालक सिर के बल हाथ रखकर सो रहा था। उसका मुख लम्बे

बालों से कुछ ढक गया था, परन्तु चेष्टा से प्र-
कट था कि वह जीता जागता है और माता को
धीरज हो गया है कि मेरा नन्हा अभी जीता है।
माता उधर झपटी और चाहती थी कि बच्चे को
गोद में उठाले परन्तु दो पग भी न गई होगी कि
उसका जी सन्न हो गया। पासही एक बहुत बड़ा
विषधर सर्प बैठा हुआ बालक पर चोट करने
की घात में लग रहा था। वह बड़ा भयंकर था।
उसकी चमकती हुई आंखों को देखकर डर ल-
गता था। वह चाहता ही था कि बच्चे का कार्य
पूरा करें और माता की आशा निष्फल हो जाये!
दलथम्भनासिंह के कन्धे पर पुराने ढबकी बन्दूक
थी। उसने उस को उठाया। उसकी स्त्रीने घब-
राकर कहा "ईश्वर के लिये जल्दी गोली च-
लाओ भैया बच जाये।"

परन्तु कहने और करने में बड़ी विशेषता होती हैं। दलथम्भनासिंह कुछ आगा पीछा करने लगा क्योंकि सांपके मारने से बच्चे के मरने का भय था। पन्ना अपने पतिके आगे पीछे को समझ गई। क्षणभर के पीछे माता की गोद बच्चे से सदैव के लिये खाली हो जाती, ग्रामवासी कोमलांगी राजपूतनी इस कामके लिए कटिबद्ध हो गई। पतिको गोली चलाने में शंका थी। स्त्री के हाथ पांव कांप रहे थे। राजपूत साथी आश्चर्यित था स्त्री की दृष्टि उसकी ओर गई। दूसरी बार सर्पने फण उठाया और उसी क्षण पन्नाने दुष्टको बन्दूक का निशाना बनाया और बातकी बात में सांप का फण छिन्न भिन्न होगया और समय माताके प्यार करनेवाले हाथोंने बच्चे को बड़े वेगसे खींच कर छाती से चिपटा लिया।

पन्ना का (लक्ष्य) निशाना ठीक बैठा। बन्दूक का शब्द सुनकर सांप भी सन्न से निकल गया।

इन सबको बड़ा हर्ष हुआ। पन्ना बार २ अपने बच्चे को चूम चूम कर छाती से लगाती थी। वह बन्दूक का शब्द सुनकर चौंक पड़ा और फिर व्याकुल हो गया; परन्तु थोड़ी देर पीछे आंख खोलदी। सब के जीमें जी आया वह भी अपने माता पिता को पाकर आनन्दित हुआ। राजपूत साथीने दलथम्भनसिंह की ओर देखा और उसने उसी क्षण स्वीकार किया "कि मैं जानता नहीं था, निस्सन्देह मेरी पत्नी बड़ी साहसी है। वह सच्ची राजपूतनी है; जो क्षणमात्र में अवसर को देखकर समयानुसार काम कर सकती है। यह स्वभाव वीर पुरुषों में भी नहीं

पाये जाते" और फिर उसने कभी अपनी स्त्री को ऐसी बातें नहीं कहीं जो राजपूत स्त्रियों के अयोग्य हों।

यदि हमारे स्वदेशवासी स्त्रियों को विद्योपार्जन करने की सामग्री एकत्रितकरदें तो वह देखेंगे कि जिस धार्मिक और देशोपकारी कार्य को वह वर्षों में करना चाहते हैं स्त्रियां उसे महीनों में पूराकर दिखायेंगी।

---

* सती सावित्री *

दोहे।

ऊंचा तरुवर गगन फल, विरला पक्षी खाय।
इस फल को तो वह भखे, जो जीवत ही मरजाय॥१
जबलग आस गरीब की, निर्भय मथा न आय।
काया माया मन तजे, चौड़े रहै बजाय॥ २ ॥

मरने का भय त्यागकर, सत्त चिता चढ़ देख ।
पिव का दर्शन तब मिलै, जब मन रहै न रेख ॥३॥
सती चिता पर बैठकर, बोलै शब्द गंभीर ।
हमको तो साईं मिलै, जब जर जाय शरीर ॥ ४ ॥
सती चिता पर बैठकर, चहुं दिश आग लगाय ।
यह तन मन है पीव का, पीव संग जर जाय ॥५॥
सती चिता पर बैठकर, बोली बचन संभार ।
जीवहा मररहो, तब पावो भरतार ॥६॥
सती चिता पर बैठ कर, तजै जगत् की आस ।
आंखों बिच पिउ रमिरहा, क्यों वह होय उदास॥७
सती चिता पर बैठकर, जीवत मिर तक होय ।
खरी कसौटी प्रेम ,झूंटा टिके न कोय ॥ ८ ॥
आये थे सब हटिगये, सती न छाड़ै संग ।
वह तो पति संग यों जरै, जैसे दीप पतंग ॥९॥
प्रेम भाव मन छाइयों, उड़ उड़ लागे अङ्ग ।
अग्नि जोति की तध्य में, चमके पीउ का रंग ॥१०॥
मन मनसा, ममता गई, अहन गई सब छूट
मगन मण्डल में घर किया, काल रहा सिर कूट ॥११
जा मरने से जग डरै, मोहि सदा आनन्द ।

कब मरिहौं कब पाइहौं, पूरन परमानन्द ॥ १२ ॥
मरते मरते मर गये, सब्ब मरा न कोय।
दास कबीरा यों मरे, फिर नहि जीना होय ॥१३॥
जीते जीते सब मुये, जीना रहा न कोय।
दास कबीरा यों जिये, काल न पावे सोन ॥१४॥
सती प्रेम बिच है, मन माती पिव रंग।
सहजै छोड़े देह को, ज्यों कैंचली भुजंग ॥ १५ ॥

सावित्री–महर्षि ब्रह्मा की स्त्री थी। यह पूजनी परम पवित्र, शुद्ध आत्मा और सरल स्वभाववाली थी यह केवल कर्म, धर्म और घर गृहस्थ के कामों को ही नहीं जानती थी वरन् आध्यात्मिक ज्ञान की बहुत अच्छी समझ बूझ रखती थी। इस की कुक्षि से चार पुत्र सनक, सनत्कुमार, सनन्दन, और सनातन और एक पुत्री सरस्वती उत्पन्न हुई थी। आज कलकी तरह उस समय पठन पाठनका प्रचार नहीं था, और लोग अक्षर तक न जानते थे। न

कहीं पुस्तकों का नाम था न पाठशालों का प्रबन्ध था। लोग वेद भगवान के मंत्रों को सुनकर कंठ कर लेते थे। विद्योपार्जन की प्रणाली ब्रह्मा के समय से नियत हुई है इसी कारण वेदों क श्रुति कहते हैं। साविात्रि ने अपनी संतान की शिक्षा स्वयं की थीं। सन्तान को सुयोग्य, सुशिक्षित और सुशील बनाने के लिये माता की समझ बूझ को अधिक लाभ-दायक समझना चाहिये, सावित्री स्वयं गुण वती थी और इसके अतिरिक्त आध्यात्मिक विद्या की जाननेवाली थी, अतएव उस की पांचों सन्तान संसार में पाण्डित्ययुक्त और सर्व विद्या निधान होकर उच्च पदवी को प्राप्त हुई और आज दिन भारत भूमि में उन की कीर्ति की अचल ध्वजा फहराती हुई उनके महान् गौरव की साक्षी देरही है।

सावित्री अपनी सन्तान को साथ रखकर और ऋषिपत्नियों की सभा में दूसरों को उनके साथ शिक्षा देती थी और नित्य निवृत्ति के आशय पर व्याख्यान देती थी। उसका परिणाम यह हुआ कि उसके सत्संग के प्रभाव से उसकी सन्तान विरक्त हो गई और चारों ऋषि पुत्रों ने विद्या सीखने के पीछे अपने चित्तको एक मार्ग गामी बनाया! उनमें से सनत्कुमार आयुर्वेद विद्या का ज्ञाता और महान् पण्डित हुआ है। सरस्वती जीवन पर्यन्त ब्रह्मचारिणी रहकर अनेक विद्याओं की अधिष्टात्री हुई। लेख प्रणाली, गणित, वार्तालाप, रागविद्या, सितार, बीन, बांसुरी और मृदंगादि बाजों की प्रचार करनेवाली यही देवी है।

सावित्री सत्संग में सदैव कहा करती थी

"मनुष्य को संसार में बालक के समाननिर्लेप रहना चाहिये, क्योंकि इस युक्ति से जीवन व्यतीत करने में आत्म सुख प्राप्त होता है और दुःख से छुटकारा मिलता है" उसके उपदेश का प्रभाव हम उस की संतान में देखते हैं। यह बात अब तक प्रसिद्ध है कि सनत्कुमारादि बालऋषि हैं और सरस्वती का वृत्तान्त आप पर विदितहै। उसका चित्र जो आजकल बनाया जाता है उसमें भी उसके बचपन की भोलीभाली चेष्टा की कान्ति के दिखलानेका प्रयत्न किया जाता है।

वास्तव में इसी प्रकार जीवन व्यतीत करना चाहिये और जीवन पर्यन्त बालकों की तरह अपने चित्तकी वृत्तिको रखना चाहिये। हमको ईश्वर की उपासना और सतसंग की

सहायता से बालकों की अवस्था को प्राप्त करना चाहिये। इसीको परमहंस वृत्ति कहते हैं और यही अहिंसा रूप है। बालक यदि किसी प्रकार की हानि भी करता है तो लोग उसको अनुचित नहीं समझते उस की बुराई को और लोग नहीं देखते। परमहंस एक अबोध बालक है, जिसने बाल्यावस्था की अज्ञानता के अतिरिक्त अपने स्वभाव को स्वयं छिपा रक्खा है और उस के सहारे वह परमगति को प्राप्त करलेता है। ऐसे अबोध बालक को माया भी अपने जाल में फंसाने में असमर्थ है उससे सब प्रेम करते हैं, सब उसको चाहते हैं। कोई उसको हानि नहीं पहुंचा सक्ते न कोई उससे घृणा करता है न कोई उसका शत्रु है। उसका आत्मा पवित्र है और उसका हृदय स्वच्छ है। उसका

चित्त वह निर्मल आकाश है जिस में राग और द्वेषरूपी घटनायें पवित्रता रूपी वायुप्रहार से छिन्न भिन्न होजाती हैं। उसका स्वभाव शरदऋतु का स्वच्छ चन्द्र है जिसकी शीतल छाया चित्तको प्रसन्न और आनन्दित करती है। बालक मुसकराता है सब खिल खिलाकर हँस पड़ते हैं। जिस स्थान में बालक खेलता कूदता रहता है देखने वाले बड़े प्रसन्न होते हैं। यही स्वभाव साधुओं के हैं और उनमें होना भी आवश्यक है।

चौपाई।

बाल रूप सम जगमें रहो।
बालक बन सबका चितहरो॥
विचरो जगमें बाल समान।
स्तुति निन्दा करो न कान॥

भोग बासना सबही त्यागो।
बालक सम माता हियलागो॥
खेल कूद यों लीला ठानी।
अंत मातु के गोद समानी॥
मोक्ष बंधका भय नहिंताको।
लोकलाज की भीर न वाको॥

धन्य है वह प्राणी जिन के ऐसे स्वभाव होते हैं क्योंकि जीवन मुक्ति का अधिकार ऐसे ही महानुभावों को होता है।

सावित्री घर के काम काज से छुट्टी पाकर अपना समय नीति, धर्म, पतिव्रत भाव और ईश्वरीय ज्ञान सिखाने में व्यतीत करती थी। हिन्दूओं के पुराणों में कहीं कहीं लेख है, कि वह धर्मशास्त्रों के संग्रह करने में ब्रह्मा को

सहायता देती थी और ऋषि हर बात में उस का परामर्श लेता था।

इस देवी की आत्मा और हृदय इतना स्वच्छ था और इस की बुद्धि इतनी तीव्र थी कि उस समय भी इस के आचरण के प्राणी बहुत कम थे। परन्तु फिर भी वह कभी २ ऋषि से स्त्री धर्म की बातें पूछती रहती थी और इस उपदेश से अन्य स्त्रियों को भी लाभ पहुंचाया करती थी। सामवेद के गाने में यह अद्वितीय थी। जिस छन्द को यह अधिक प्रेम से गाती ब्रह्मा ने उसे उस के ही नाम से प्रसिद्ध किया। (हम नहीं कह सकते कि यह बात कहां तक ठीक है)।

एक दिन सावित्री ने जिस प्रकार अपने पति की स्तुति की थी, उसका अनुवाद निम्न लेख से विदित होगा।

स्वामी ! तुम से संसार को विद्या प्रकाश मिला है। तुम सब के पूज्य हो। मैं तुम को नमस्कार करती हूं, प्राणपति ! तुम मेरे मस्तक के चन्द्रमा मेरे मन और वाणी के स्वामी हो मैं तुम को नमस्कार करती हूं।

भगवन् ! तुम मेरे सहायक हो जैसे तारागण सूर्य की परिक्रमा करते हैं वैसे ही मैं भी तुम्हारी परिक्रमा करती हूं। मैं तुमको नमस्कार करती हूं।

प्रियतम ! तुम मेरी दृष्टि में आनन्द स्वरूप हो। तुम मेरी समझ, बूझ, ज्ञान और भक्ति के आधार हो। मैं तुम को नमस्कार करती हूं।

प्राणनाथ ! तुम दीन की रक्षा करने वाले आधीन के सहायक और अज्ञानियों के ज्ञान हो मैं तुम को नमस्कार करती हूं।

दयामय ! मैं तुम्हारी स्त्री, दासी और सेविका हूं। अज्ञानवश जो कुछ अपराध हुआ हो क्षमा करो, मैं तुम को नमस्कार करती हूं।

दीनबन्धो ! यदि मुझको तुम्हारा सहारा न होता तो मेरी क्या दशा होती। मैं केवल तुम्हारे आसरे भवसागर पार करूंगी। मैं तुम को नमस्कार करती हूं।

सावित्री प्रायः इस प्रकार की स्तुति किया करती थी जिसका वृत्तान्त बहुधा पुस्तकों में भी पाया जाता है। उसका आचरण बहुत उत्तम था। हमारी वर्त्तमान स्त्रियां अपने स्वभाव को सुशील और नम्र बनाने के लिये इस से शिक्षा ले सकती हैं।

ब्रह्मा इस अपनी धर्मपत्नी को बड़े प्रेम की दृष्टि से देखता था और पति पत्नी दोनों परस्पर प्रेम में मग्न रहते थे।

ईश्वर करे सावित्री के ऐसी सदाचरण वाली माताएं इस देश में पुनः अवतार धारण करके भारतभूमि को पवित्र करें ।

अनसूया ।

अनुसूया–जिसका चरित्र रामायण के अयोध्याकाण्ड में वर्णित है, कर्दम-ऋषि की पुत्री थी । उस की माता का नाम [देवहूती] था । अनुसूया की आठ बहनें थीं और कपिल मुनि सांख्य शास्त्र का ग्रन्थकर्त्ता इसी देवी का भाई था, जिस ने कपिल ऋषि के तत्त्वबोध का चमकता हुआ तारा बनाया था अपनी कन्याओं के पढ़ाने लिखाने में वह कैसे आलस्य कर सकती थी । वह स्वयं कुशल

और धर्मात्मा थी । इसीलिये यह परम आवश्यक था कि उसकी सन्तान भी धर्मज्ञ और सुबुद्धि-युक्त होती । नौ बहिनों में अनुसूया भोली भाली और धर्म में विशेष रुचि रखने वाली कन्या प्रतीत की जाती थी उसका विवाह अत्रिऋषि के साथ हुआ था । जो बड़ा ज्ञानी वेद शास्त्र का जानने वाला और जप तपादि व्रतों का धारण करने वाला था । अनसूया ऋषि की सेवा को परम धर्म समझती थी । वह पति सेवा को अपना कर्तव्य समझती थी । और इसी में अपने दीन दुनियां की भलाई जानती थी । इस सती को संसार में बड़ा कष्ट सहना पड़ा परन्तु उसने साहस और धैर्य से काम लिया और अन्त में सुख को प्राप्त हुई ।

एक समय देश में ऐसा काल पड़ा कि एक

एक दाना स्वप्न होगया खेती बारी सब मारी गई। वृक्षों के फल पत्रादि सब सूख गये और मनुष्य व जीव जन्तु सब भूखों मरने लगे। उसी समय में अत्रि ऋषि अपने आत्मा को पवित्र और स्वभावको दृढ़ करने के लिये एकान्त सेवन और योगाभ्यास करने लगे। कभी २ उनकी समाधि की सीमा बढ़ जाती थी। और जब वह जाग्रत् अवस्था में होते अनसूया उनके क्षुधा और पिपासाग्नि को किसी प्रकार शान्ति करती वर्षा, शरद और ग्रीष्म ऋतु सब व्यतीत होगये इस पतिव्रता स्त्रीने अनेक प्रकार के दुःख सहे। दिन२ भर भूखी रहगई अन्नसे भेंट नहीं हुई परन्तु उसको सदैव इस बात का ध्यान रहता था कि ऐसा न हो अत्रि भगवान् समाधि से जागे तो उनको आवश्यक वस्तुओं के न हो-

ने से कष्ट उठाना पड़े। तन मन से वह इसी सोच में लगी रहती थी। और यदि हमसे कोई पूंछे तो हम निस्सन्देह कहने को उद्यत हैं कि ऐसे सदाचारको, ऐसे धर्मभाव को और ऐसे पवित्र स्वभाव को भी योग कहते हैं ऋषि पर क्या विदित था कि देश में काल पड़ा है। लोग भूखे मर रहे हैं वह समाधि से उठे अनुसूया हाथ जोड़ खड़ी है भगवान् क्या चाहिये ! जल भी है कन्द मूल फल भी रक्खा है। यह जितेन्द्रियता और यह सत्य प्रेम अब कहां देखने में आता है। सच्ची बात तो यह है कि योगियों को भी इस स्वभाव पर आश्चर्यित होना चाहिये।

सूखा काल के कारण नाना प्रकार की आपत्तियां बढ़ती गईं। समीपवर्ती झरने जिन से आश्रमवासियों को पानी मिलता था सूख

गये। सती अब कोसों का चक्कर लगाकर पानी लाने लगी। फल फूल बड़ी कठिनता से मिलते थे परन्तु इसका परिश्रम और उद्योग व्यर्थ नहीं जाता था आज कमण्डलु हाथ में लिये वह कोस भरकी दूरी से पानी लाती है चार दिन पीछे वह सोता सूख गया उस को आगे बढ़ना पड़ा और उसके सूख जाने पर उसको दूसरी ओर खोज करनी पड़ी।

आश्रमवासी इस अकाल दुःख को न सह सके। एक२ करके निकल भागे। अनसूया भी चाहती थी कि वह आश्रम छोड़ दिया जाय परन्तु ऋषि समाधिकी अवस्था में थे। उसके तप में कैसे विघ्न डाल सकती थी। उसने कभी कोई बात नहीं कही और जिस प्रकार होसका उनके लिये आवश्यक सामग्री एकत्रित करती रही।

दैव वश जिस सरोवर से पानी मिलताथा वह भी अकस्मात् सूखगया। अनसूया को बड़ा दुःख हुआ। अब पानी कहां से आयेगा! ऋषि समाधि से उठकर पानी मांगेगे मै कहां से उन को दूंगी। बेचारी कई दिन से आप भी प्यासी रही। इसी समय के अनन्तर आत्र समाधि से जागे और उठतेही पानी मांगा। परन्तु पानी कहां था अनसूया ने उस समय भी ऋषि को इस दुर्घटना से सूचित करना उचित न समझा कमण्डलु हाथ में लेकर वह पानी के खोज में निकली आश्रम के दो चार दस कोस तक पानी का नाम न था। कुछ दूर चलकर एक वृक्ष के नीचे बैठकर रोने लगी 'प्रभो! मेरी ओर दया दृष्ठि से देखिये। मुझपर दया कीजिये स्वामी ने पानी लाने की आज्ञा दी और मैं इस आज्ञापा-

लन में असमर्थ हूं। क्या करूं कहां जाऊं किस से कहूं देशपर अकाल का पहाड़ टूट पड़ा है अन्न पानी स्वप्न होगया है दुःखित होकर सब अ-श्रम से भाग गये हैं अब तेरे सिवाय किस का आश्रय है।

जब वह इस प्रकार विलख रही थी एक तपस्विनी उधर से आनिकली। उस अनसूया के विलापको सुनकर उसकी ओर चली और निकट आकर उसके दुःख का कारण पूंछने लगी। अनुसूया ने आद्योपान्त अपनी अवस्था कह सुनाई। तपस्विनी सुनकर बड़ी प्रसन्नहुई उसने ऋषि पत्नी से कहा "धन्य है तेरा पातिव्रत भाव धन्य है पति सेवा यह व्रतका अनुष्ठान चिता पर पति के साथ जलने से अधिक प्रशंसनीय है। तू कुछ सोच

न कर मेरे साथ चल मैं अवश्य तेरी सहायता करूंगी और कहीं से तेरे लिये जलका प्रबन्ध करदूंगी"।

हाथ में बेरकी लकड़ी लिये हुये तपस्विनी, इधर उधर जलाशय खोजने लगी। आश्रम से थोड़ी दूर पर एक सूखा स्थानथा। वहां उसकी लकड़ी हिलने लगी और तपस्विनी हँसकर बोली ले पानी मिलगया, वह सुन आश्चर्यित हुई क्योंकि एक बूंन्द पानी का कहीं पता न था तपस्विनी बोली इस स्थान में पानी का बड़ा गहरा कुण्ड है और केवल दो चार हाथ खोदने से पानी निकल आवेगा, तपस्विनी के पास उसके खोदने का यंत्र भी था। वह अनसूया के साथ मिलकर पृथवी खोदने लगी थोड़ी देर पीछे उसमें से पानी की धार फूट निकली। ईश्वर का

घर बड़ा है या तो एक बून्द पानी स्वप्न था या बात की बात में पानी होगया। अनसूया बड़ी आनन्दित हुई। तपस्विनी के पांवपर गिरपड़ी और कमण्डलु भरकर पति के पास आई पानी जितनाही स्वच्छ और निर्मल था उतनाही स्वादिष्ट और मीठा था। अत्रिको आश्चर्य हुआ और जब उसकी पिपासाग्नि शांति हुई उसने अनसूया के देर से आने और ऐसे निर्मल और मीठे पानी के लाने का कारण पूछा अनुसूया ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। अत्रि को और भी, आश्चर्य हुआ। वह तपस्वनी की खोज में बाहर आया तपस्वनी पानी के धार के निकट बैठी थी, अत्रिने उसको प्रणाम किया और आश्रम में चलने के लिये प्रार्थना की।

तपस्वनी ने कहा "तुम्हारी स्त्री धन्य है।

आज़ वर्षों से अकाल पड़ा है परन्तु वह तुम्हारी सेवा कितनी परिश्रम और सावधानी से करती रही और तुमको लेशमात्र भी कष्ट न होने दिया। देश विना अन्नके दुःखी है, ताल तलैयां सब पड़ी हैं चतुष्पद जीवों को घास का तिनका तक नहीं मिलता। सारे जीव जन्तु भूखों मर रहे हैं। ऐसी सती, धार्मिक, और पतिजुष्टेव स्त्रियें बडे भाग्य से मिलती हैं ऋषि अपनी धर्म पत्नी की प्रशंसा सुन बड़ा प्रसन्न हुआ, तपस्विनी को आश्रम में लाया और समयानुकूल बड़े आदर सत्कार से उसकी आतिथ्य की।

जो नदी इस सोते से प्रगट हुई। ऋषि पत्नी के स्मरणार्थ उसका नाम संसार में अत्रि-गंगा विख्यात हुआ और बहुत काल तक उस से उस खण्ड का स्थल पानी पाता रहा लेख द्वारा

प्रतीत होता है कि प्राचीन समय में ऋषि के नाम से वहां एक शिवालय बनवाकर अत्रेश्वर महादेव की मूर्ति स्थापित कीगई थी।

अनसूया के कुक्ष से तीन पुत्र दत्तात्रेय, दुर्वासा और चन्द्र उत्पन्न हुये थे, तीनों पुत्र विद्वान पुरुषार्थी धर्मात्मा, जितेंद्रिय और ईश्वरके भक्त थे। इन में दत्तात्रेय बड़ा बुद्धिमान् ज्ञानवान् नीतिकुशल, दुरदर्शी और ईश्वर का उपासक था। विद्या सीखने के पीछे एक दिन यह माता के पास आकर कहने लगा "तू बतादे किसको गुरू धारण करूं'अनसूयाजी स्वयं बड़ी बुद्धिमान थीं कहने लगी वत्स! यह सारा ब्रह्माण्ड ईश्वर के विचित्र रचना से सुशोभित है इसमें उस का ज्ञान हर जगह परिपूर्ण होरहा है यदि मनुष्य बुद्धिमान् है तो सृष्टि का प्रत्येक पदार्थ

उस के उपदेश का मुख्य कारण बन जाता है। यह ईश्वर के रचे हुए अलौकिक पदार्थ मनुष्य को स्वाभाविक रीति से ज्ञान का सत्योपदेश करते हैं। यदि मनुष्य के हृदय में ज्ञान का चक्कर हो तो वह इन पदार्थों से भलीभांति शिक्षा ले सकता है यदि वह अज्ञानता से इन पर विचार करने में असमर्थ है तो महापांडित्य युक्त गुरु से भी कुछ लाभ नहीं उठा सकता।

सोरठा।

फूलै फलै न वेत, यदपि सुधा वर्षहिं जलद।
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं विरंचि सम

दत्तात्रेय उसी क्षण माता के पवित्र चरण कमलों को बन्दना करके बाहर निकला और उसने स्वाभाविक पदार्थों से ईश्वरीय ज्ञान

प्राप्त किया और वह उस समय ईश्वरीय ज्ञान, तत्वबोध और आत्मिक स्वभाव में अद्वितीय था।

एक समय अनसूया प्रातिष्ठानपुर आई जो चन्द्रवंश राजाओं की राजधानी थी यहां नर्मदा एक ऋषि की पतिव्रता स्त्री रहती थी जिसका शरीर रोग और व्याधि से व्यर्थ हो गया था। नर्मदा एक दिन रो रो कर उसको अपना दुःख सुनाने लगी अनसूया ने कहा तू स्वयं अपने पति की औषधि है यदि उस को सदैव आरोग्य रख सकती है, संयम और आत्मा की शुद्धता ईश्वर की उपासना यह सब ऐसे कार्य हैं जिन से मनुष्य आरोग्य रहता है। अनसूया ने फिर नर्मदा के पति की यथावत् चिकित्सा की, उसका रोग प्राणघातक

समझा जाता था । यद्यपि अनसूया की उप-
योगी औषधि और नर्मदा की सेवा ने उसको
अच्छा कर दिया । नर्मदा भी अनसूया की
तरह पतिव्रता थी । और उस के स्मरणार्थ
मध्यदेश में एक नदी इस नाम से विख्यात है ।

जिस समय महात्मा [रामचन्द्र जी] वन-
वास की अवस्था में विचरते हुये आत्रि आश्रम
पर आ निकले ऋषि ने उन से मिल कर सब
से पहिले अपनी पत्नी का चरित्र सुना कर
सीता को उस के उपदेश सुनने की आज्ञा दी
और जब सीता बड़ी श्रद्धा से उस के चरणों
की बन्दना कर के बैठ गई अनसूया ने उस
को इस प्रकार उपदेश किया । 'सीता ! तू
धन्य है जो धर्म को इतना चाहती है सांसा-
रिक सुखों का परित्याग कर के राम के साथ

रह कर बन का दुःख उठाना तेरे धर्म भाव का प्रमाण है जो स्त्री ग्राम, नगर अथवा वन पर्वत में रह कर अपने पति की आज्ञा में तत्पर रहकर सेवा करती हैं वह परम पद की अधिकारी होती हैं । पुरुष चाहे अच्छा हो या बुरा स्त्री को उसे देवता समझ कर पूजा और प्रतिष्ठा करनी चाहिये मेरी समझ में पुरुष से अधिक स्त्री का कोई मित्र और साथी नहीं है लोक और परलोक में उस की सेवाका ध्यान रखना स्त्रीका परम धर्म है। प्रायः स्त्रियों में बुद्धिहीन और कुमार्गगामी भी होती हैं यह अपने पति को अपने वशीभूत रखना चाहती हैं और अपनी बात को पति की बातों से ऊपर रखना चाहती हैं इनका कभी भला नहीं होता ऐसी स्त्रियां संसार में निन्दित होती हैं और उनका

बड़ा अनादर होता है धर्म के मार्ग से नीचे गिर जाती है परन्तु सुशील स्त्रियां जो तेरी तरह गुणवती और धार्मिक हैं वह परलोक दोनों को सुधारती हैं और धर्मात्मा लोग उनको देवी समझकर पूजते हैं तू इन अच्छी स्त्रियों के मार्ग पर चलने का यथावत् प्रयत्न कर अपने पतिकी सेवाकर और तुझको यश कीर्ति और बड़ाई सब कुछ मिलेगा ।

यह उपदेश देकर अनुसूया ने सीता से अपने पति अत्रिका चरित्र सुनाया फिर अपने हाथसे उपटन लगाकर स्नान कराया सुगन्धित तैलादिसे उसके केशों को गुंधकर सुन्दर सुन्दर गहने और कपड़े पहनाये फिर सीता से उस की उत्पत्ति और स्वयंवर का वृत्तान्त पूछा और उसको अपनी पुत्री की भांति लाड़ प्यार कर के राम के पास भेज दिया ।

अनुसूया की सारी अवस्था पतिकी सेवा में व्यतीत हुई। पतिके ध्यान में मग्नहोकर वह योगियों की दशा में रहती थी और ऋषि व उसकी संतान इस सती की बड़ी प्रतिष्ठा आदर और सत्कार करते थे। जो कोई आश्रम में आता था इस पवित्र देवी की पूजा करता था और इसके प्रिय उपदेशके एक एक शब्द को बहुमूल्य रत्न की भांति अपने हृदयरूपी मंजूषा में रख छोड़ता था इसके पतिव्रता का भाव सारे संसार पर पड़गया था। और इसी पवित्र देवीकी अनुग्रह से उसकी सन्तान पवित्र और धर्मात्मा बनगई।

धन्य है वह घर जहां ऐसी स्त्रियां शोभायमान हैं धन्य है वह प्राणी जिनमें पवित्र आत्मायें प्रगट होकर उनको स्वर्गधाम का सुख देती हैं।

ईश्वर करे अनुसूया का चरित्र हमारी बहिन बेटियों को धर्म का मार्ग बताये और उनमें अनुसूया जैसी सच्ची देवियां उत्पन्न हों क्योंकि जहां ऐसे धर्मात्माओं के पवित्र चरण जाते हैं, दुःख दुरापत्तिदूर होजाते हैं वह समय था जब इस देश में ऐसे पवित्र जीव उत्पन्न होते थे।

महाराज यशवंतसिंह की रानी

यह महारानी उदयपुर की राजपुत्री थी। इन्होंने अपने पति महाराज यशवन्त के हाथ औरंगजेब और मुराद की सम्मिलित सेनाने उनसे बड़ी वीरता से लड़कर जोधपुर लौट आने पर जो बर्ताव किया उससे अनुमान किया जाता है कि पहली क्षत्राणियों के कैसे उच्च भाव होते थे फ्रांस के यात्री बर्नियर ने अपनी

भारत यात्रा की पुस्तक में लिखा है, कि इस अवसर पर गगवन्तसिंह की पत्नी ने जो राणा के कुलकी थी अपने स्वामी के साथ जो व्यवहार किया वह भी सुनने योग्य है। जिस समय उन्होंने सुना कि उनके पति आठ हजार में से पांच सौ योधाओं को लिये हुए अप्रतिष्ठा के साथ नहीं वरन बड़ी वीरता के साथ लड़कर युद्ध क्षेत्र से चले आरहे हैं तो उस समय उस शूर वीर योधा के निकट बधाई और आश्वासन को संवाद भेजना तो दूर रहा बड़ी निठुरता से आज्ञादी कि किले के सब फाटक बन्दकर दिये जावें इसके पश्चात् उन्होंने कहा, मैं ऐसे निन्दित पुरुषों को किले के भीतर नहीं आने दूंगी ऐसा व्यक्ति मेरा पति राणा का दामाद और ऐसा निर्ल्लज ! मैं कदापि ऐसे पुरुष का मुख

देखना नहीं चाहती। ऐसे महान् पुरुष का सम्बन्धी होकर इसने उसके गुणों का अनुकरण न किया। यदि यह लड़ाई में बैरियों को हरा नहीं सक्ता तो यहां आने की क्या आवश्यकता थी वहीं युद्धक्षेत्र में वीरता के साथ लड़ कर मरजाना उचित था। फिर तुरन्त ही उस के मन में दूसरा विचार पैदा हुआ और उस ने कहा अरे कोई है तो मेरे लिये चिता तैयार करदो मैं अपनी देह अग्नि के भेंट करूंगी सच मुच मुझे धोखा हुआ मेरे पति सचमुच लड़ाई में मारे गये, इस के सिवाय कोई दूसरी बात नहीं हो सक्ती और फिर कुछ सावधान होने पर क्रोध में आकर बहुत बुरा भला बकने लगी आठ नव दिन तक उनकी यही हालत रही इस बीच में यशवंतसिंह से वह एक बार भी नहीं मिली।

अन्त में अब उनकी मा उनके पास आई और उन्होंने समझाया कि घबराओ नहीं, राजा कुछ विश्राम लेकर और नई सेना इकट्ठी कर फिर औरंगजेब पर आक्रमण करेंगे और अपनी वीरता एवं साहस का परिचय देंगे तब वह कुछ शांति हुई।

बार्नियर लिखते हैं कि "इससे यह प्रकट होता है कि इस देश की स्त्रियों को अपने नाम प्रतिष्ठा और कुल गौरव का इतना ध्यान है और उनका हृदय कैसा सजीव है मैं ऐसे और भी दृष्टान्त दे सक्ता हूं क्योंकि मैंने बहुत सी स्त्रियों को अपने पतियों के साथ चिता में जलकर मरते अपनी आंखों से देखा है लेकिन यह बातें मैं किसी दूसरे अवसर पर आगे चलकर वर्णन करूंगा, वहां मैं दिखलाऊंगा कि मनुष्य

के चित्त पर आशा, विश्वास, प्राचीन रीति नीति धर्म और सन्मान के विचार का कितना दूर प्रभाव पड़ता है। पाठक ! यह केवल वीर भाव था कि जिसने रानी को अपने प्राण तुल्य प्रियतम को कठोर शब्द कहने को विवश किया इस समाचार से पाठक समझ सके हैं कि राजपूत स्त्रियां कैसी शूरवीर और उच्च विचार की होती रही हैं।

—:०:—

जवाहिर बाई

सन् १५३३ ई० में गुजरात के बादशाह बहादुरशाह ने प्रचण्ड सेना के साथ चित्तौड पर आक्रमण किया। इस समय कायर और विषयी राणा विक्रमादित्य चित्तौड़ की गद्दी पर था इसलिये सब को चिंता हुई कि चित्तौड़ का

उद्धार कैसे होगा ! सिसोंदिया कुल के गौर की रक्षा कैसे होगी । किस रीति से राजपूत वीर स्वदेश रक्षाकरसकेंगे ऐसी चिंताओं से सब चिंतित थे कि देवालिया प्रतापगढ़ के रावल बाघजी अपनी राजधानी से आकर राणा के स्थान में मरने मारने को तय्यार हुये । उनकी आधीनता में सब राजपूत वीरता के साथ युद्ध के लिये सन्नद्ध होगये मुसलमान सेना राजपूतों की अपेक्षा बहुत थी। परन्तु फिर भी राजपूत विचलित न हुये ।

सब ने सपथ खाई कि या तो पूर्ण पराक्रम से लड़कर विजय प्राप्त करेंगे या युद्ध में प्राण देकर वीर गति प्राप्त करेंगे । युद्धके आरम्भ होतेही बहादुरशाह ने पहले अपनी तोपों सेही काम लिया परन्तु राजपूत तोपों की गर्जना

सुनकर द्विगुण उत्साह से उत्साहित होकर जिधर से गोला आता था, उधर बड़ी फुर्ती से अपने तीक्ष्ण बाण चलाने लगे। उस समय तोपों से न तो बहुत दूरकी मारही होती थी, और न बहुत जल्द २ चलती थी इसलिये तोप के साथ २ बन्दूकें भी मुसलमान सेना को चलानी पड़ी बन्दूकों के धुआं से रणस्थल अन्धकाराच्छादित होगया। दोनों पक्षके बहुत सैनिक मारे गये परन्तु बहादुरशाह किसी रीति से चित्तौड़ पर अधिकार न करसका।

अन्त में बहादुरशाह ने एक ओरके किले की दीवार बारूद की सुरंग से उड़ाने का विचार किया और जो स्थल सुरंग से उड़यागया वह हाड़ा वीर अर्जुनराव अपने ५०० योद्धाओं के साथ युद्ध कररहे थे इस लिये अपने समस्त

सैनिकों के सहित मारे गये। वैरियों ने इस समय भग्न दुर्ग के भीतर घुसने के लिये धावा किया परन्तु चित्तौड़ अभी वीर शून्य न था। वीरवर चूडावत राव दुर्गादास, उसके मुख्य सुभट सन्ताजी और दुदाजी तथा कितने एक सामन्त और सैनिक शत्रुओं के सामने अचल और अटल रूप से डटे रहे।

देहमें प्राण रहते कोई उनको हटा न सके वीर विक्रम से वे मुसलमानों के धावे को हटाते रहे परन्तु थोड़े से राजपूत कबतक प्रचण्ड यवन सेनाका प्रतिरोध करसक्ते थे!

वीरत्व के साथ युद्ध करते रहने के पीछे जब वे मरते २ कम रहगये तो रणोन्मत्त मुसल-मान अली २ कहते हुए किले में घुसने लगे। अकस्मा तफिर उनकी गतिका अवरोध हुआ

सबने चकित होकर देखा कि योद्धा वेषमें एक रमणी प्रचण्ड रणतुरंग पर चढी हुई और हाथ में भाला लिये हुये खड़ी हुई है। यह वीर मतिला राज माता जवाहरबाई थी जवाहरबाईने जब हाड़ाओं के मारे जानेका समाचार सुना तो उन को विचार हुआ कि अब यदि कहीं राजपूत निराश और साहसहीन होगये तो चित्तोड़का बचना कठिन है इस लिये कवच धारणकर और शस्त्र ले स्वयं वहां पहुची जहां घमसान युद्ध होरहा था। योद्धाओं को युद्ध के लिये उत्साहित करती हुई आप भी लड़ने लगी रानी की वीरता को देखकर राजपूतों ने ऐसा पराक्रम दिखलाया कि यवनों को पीछे हटना पड़ा।

यह वीर नारी सब राजपूतों के आगे रंध्रपथ रोके खड़ी थी जो यवन आगे को ब-

ड़ता था वही इसके भाले से मारा जाता था भाले के दारुण प्रहार से बहुत्त से यवन सैनिक मारे गये।

कई यवन वीर एक साथ आने लगे परन्तु फिर भी वीर क्षत्राणी निरुत्साहित न हुई असीम सहास से रणोन्मत्त यवनों से युद्ध करती रही। दूसरे गजारूढ़ बहादुरशाह विस्मयापन्न होकर देख रहा था।

रमणी का अद्भुत्त रण कौशल देखकर वीरत्वाभिमानी यवन वीर आश्चर्य युक्त हुआ वीर महिषी जवाहरबाई जहां यवन दलकी प्रबलता देखती वहीं तीव्र वेग से अपने घोड़े को लाकर युद्ध करने लगती थी जब कि राजपूतों और मुसलमानों में घोर युद्ध होरहा था धड़ शीश गिर २ कर लड़रहे थे शवके ऊपर शव गिररहे तो

रह गई तब किला यवनों के हाथ में चला गया रानी इस पर भी नहीं घबड़ाई और बराबर लड़ती रही। जब किसी रीति से बचने का उपाय न रहा तो अपने नर्वदा किले में चली गई, परन्तु यवन सेना उस का बराबर पीछा किये गई बड़ी कठिनाई से किले में घुस कर उसने किले का फाटक बन्द करा दिया। राजपूत यहां भी बहुत से लड़ कर मारे गये। यवन बादशाह ने रानी के पास पत्र भेजा जिस में यह लिखा था कि सुन्दरि ! मुझे तुम्हारे राज्य की इच्छा नहीं है मैं तुम्हारा राज्य तुमको लौटाता हूं किन्तु और भी तुमको देता हूं तुम मेरे साथ विवाह कर लो। विवाह होने पर मैं तुम्हारा दास होकर रहूंगा। रानी को यह पत्र पढ़ कर बहुत क्रोध आया परन्तु क्रोध करने

से क्या हो सकता था । इस लिये उसने सोच विचार कर यह उत्तर लिखा कि मुझेको विवाह करना स्वीकार है । किन्तु अभी आप के लिये विवाह योग्य पोशाक तय्यार नहीं है । कल तैयार होजाने पर शादी होगी । बादशाह यह उत्तर सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुआ । दूसरे दिन रानी ने बादशाह के पास एक उत्तम पोशाक भेज कर कहलाया कि इस को पहन कर विवाह के लिये शीघ्र आओ । रानी की भेजी हुई पोशाक को पहन कर बादशाह बड़ी खुशी के साथ शादी की उमंग में रानी के महल में आया । रानी का दिव्य रूप देख कर कहने लगा' । अहा ! यह तो कोई अप्सरा है । इस के सहवास में तो जीवन बड़े आनन्द से व्यतीत होगा । ऐसी बातें सोच कर जो आनन्द तरंग उस

समय उसके हृदय में उठ रहा थी उनका कुछ ठिकाना न था परन्तु शीघ्र ही यह आनन्द तरंग शोकसागर में प्रवर्तित होगया एक,एक बहुत भयंकर दर्द उस के शरीर में उठ खड़ा हुआ । बादशाह दर्द से व्याकुल हो गया, गर्मी से मूर्च्छागत होने लगा और आंखों तले अँधेरा छागया शरीर की पीड़ा से चटपटा कर कर कहने लगा । अरे रे रे मैं मरा. रानी ने उसका यह वचन सुन कर कहा, 'आपकी अव-स्था अभी पूरी हुआ चाहती है आपके शुभ विवाह से पहले ही आप की मृत्यु आज होने को है तुम्हारी अपवित्र इच्छा से अपने सतीत्व रूपी रत्न की रक्षा के लिये इसके सिवाय और कोई उपाय न था । कि मैं तुम्हारी मृत्यु के लिये विष से रंगी हुई पोशाक भेजती । इतना

कहकर सती ने ईश्वर से कुछ प्रार्थना की और किले पर से नर्मदा नदी में कूद कर अपने प्राण त्याग किये बादशाह भी वहीं तड़फ २ कर तत्काल मर गया इस रीति से सती प्रभावती ने समय विचार कर अपने सतीत्व धर्म और कुल गौरव की रक्षा की। धन्य है ऐसी सतियों को जिन्होंने कि तरह तरह के कष्ट सह कर और प्राण देकर अपने सतीत्व धर्म की रक्षा की जिस से आज तक उनके नाम भारत के इतिहास में पवित्रता के साथ लिये जाते हैं।

रानी हाड़ी जी।

रूपनगर की राजकुमारी रूपवती के रूप की प्रशंसा सुन कर बादशाह औरंगजेब ने बलात्कार उससे विवाह करना चाहा। जब रूपवती

को यह समाचार ज्ञात हुआ तब उसने अपने कुल पुरोहित द्वारा उदयपुर के परम प्रतापी महाराणा राजसिंह जी के पास एक पत्री भेजी जिस में लिखा था कि औरंगजेब मुझे व्याहना चाहता है। परन्तु क्या राजहंसनी गृद्ध के साथ जावेगी? क्या पवित्र वंश की कन्या म्लेच्छ को पति बनावेगी इस प्रकारका आशय पत्री में लिखकर अन्त में लिखा कि सिसोदिया कुल भूषण और क्षत्रिय वंश शिरोमणि मैं तुम से पाणिग्रहण की प्रार्थना करती हूं। शुद्ध क्षत्रिय रक्त तुम्हारी नसों में संचारित है। यदि शीघ्र न आसकोगे और अपनी शरण में लेना स्वीकार न करोगे तो मैं आत्मघात करूंगी और यह आत्महत्याका पाप तुम्हारे सिर लगेगा।

पुरोहित ने यह पत्री महाराणा साहब को दी जो कि अपने सर्दारों के साथ दर्बार में बैठे हुए थे, पत्री को पढ़ कर महाराणा जी कुछ विचारने लगे। चूड़ावत सरदार, जो समीप ही बैठे थे, कहने लगे कि महाराणा क्या है? पत्र पढ़कर किस चिन्ता में निमग्न होगये। महाराणा जी ने वह पत्र चूड़ावत जी को पढ़ने को दिया, जिसको पढ़कर उन्हों ने कहा कि यह बिचारी अबला मन से आप-को वर चुकी अब आपका कर्तव्य है कि पाणिग्रहण करें।

महाराणा जी ने उत्तर दिया कि रूप-नगर की राजकुमारी के धर्म और क्षत्रिय कुल गौरव की रक्षा के लिये ससैन्य रूपनगर जाऊंगा परन्तु एक बात का विचार हो रहा

के द्वारा फिर कहलाया कि रानी आप अपना धर्म न भूल जाना। तब हाड़ी जी समझी और उन्हें विदित हुआ कि मेरे स्वामी का मन मेरे में लगा हुआ है और जबतक इनका चित्त मेरी ओर रहेगा तब तक इनसे रणक्षेत्र में पूर्ण-काम न किया जावेगा और जिस कामके लिये जाते हैं निष्फल होवेगा। हाड़ीजी उस सेवक से बोली कि मैं तुमको अपना सिर देती हूं। इसे लेजाकर अपने स्वामी को देदना और कहना कि हाड़ीजी पहले से ही सती हुई है और यह भेंट भेजी है कि जिसे लेकर आनन्द के साथ रणक्षेत्र में जाइये और विजय पाईये और अ-पना मनोरथ सफल कीजिये किसी प्रकार की चिन्ता न रखिये। यह कहकर तलवार से अ-पना सिर काटडाला। उसे लेकर वह सेवक चू-

और कहा कि यदि आप ऐसा कर सके तो चिन्ता ही क्या है। आप ने जो उपाय बतलाया वह ठीक है। अन्य सब सर्दारों ने भी चूड़ावत सर्दार के विचार की सराहना की और अपनी २ सेना लेकर उन के साथ जाने का निश्चय कि महाराणा जी ने उसी समय पत्र लिख कर ब्राह्मण को रूपनगर को विदा किया।

चूड़ावत भी तत्काल बिदा हो अपनी राजधानी में आए और दूसरे दिन प्रातःकाल लड़ाई का डंका बजवा कर अपने योद्धाओं सहित युद्ध के लिये प्रस्थानिक होने लगे कि इतने में अपनी नवयौवना रानी को महल के झरोखे में से झांकते हुये देखा। रानी का मुख देखते ही उन की युद्ध उमंग कुछ मन्द पड़ गई

और मुखाकांति की कांति फीकी पड़ गई, वे उदास मुख से महल पर चढ़े परन्तु रानी ने तुरंत पहिचान लिया कि स्वामी का पहला तेज नहीं रहा। वह बोली कि महाराज यह क्या हुआ ? कोई अशुभ समाचार सुन पड़ा जो मुख की कांति फीकी पड़ गई जिस मन से आप डंका बजवा कर चौक में आये थे और उस समय आपकी आकृति पर जो तेज बिराजमान था वह अब न जाने कहां उड़ गया लड़ाई का धौंसा आप ने जिस उत्साह से बजवाया था। अब वह उत्साह क्यों मन्द पड़ गया सो बताइये क्या कोई शत्रु चढ़ आया है जो लड़ाई का डंका बजवाया गया है ? यदि ऐसा है तो आपका मुखाविंद क्यों उतर गया लड़ाई का डका सुन कर क्षत्री को तो लड़ाई क. आवेश

होता है सो प्राणनाथ! आपको भी शूरता का आवेश होना चाहिये था परंतु अब इस के विरुद्ध शिथिल क्यों हो गये। कोई कारण अवश्य है, आपको मेरी शपथ है आप अवश्य कहैं।

चूड़ावत जी ने उत्तर दिया कि रूपनगर की राठौरवंश की राजकुमारी को दिल्ली का बादशाह बलात् ब्याहने आता है और वह राजकुमारी मन वचन से हमारे राणा साहब को वर चुकी है इस लिये प्रातःकाल ही राणा साहब उसे ब्याहने जावेंगे और बादशाह का मार्ग रोकने के लिये मेवाड़ी सारी सेना मेरे साथ जाती है वहां घोर संग्राम होगा, और हमें फिर वहां से लौटने की आशा नहीं है क्योंकि बादशाही सेना के सामने हमारी

सेना बहुत थोड़ी होगी। मुझे मरने का तो शोक नहीं है मनुष्य मात्र को मरना है। जो मरने से डरूं तो मेरी माता की कोख को कलंक लगजावे। मेरे पूर्वज चूड़ाजी के नाम पर धब्बा लगजावे मरने से तो मैं डरता नहीं हूं। अमर कोई नहीं रहा और न मैं रहूंगा। अबेरा सबेरा मरना सभी को है परन्तु मुझे केवल तुम्हारी चिन्ता है। तुम अभी व्याही हुई आई हो। व्याहका कुछ सुख भी नहीं देखा और आज मरने के लिये जानाहै मुझे तुम्हारा ही विचार व्याकुल कररहा है। चौक में आकर ज्योंही तुम्हारा मुख देखा कि मेरा कठोर हृदय कोमल पड़गया। यह सुन हाड़ी रानी बोली महाराज यह आप क्या कहते हैं। यदि आप रणक्षेत्र में विजय प्राप्त करेंगे। तो इससे बढ़कर मेरेलिये

संसार में दूसरा कौनसा सुख है मृत्यु समय आने पर चलते चलते खड़े २ बैठे २ अथवा बातें करते २ अचानकही मनुष्य काल के वश में होजाता है। जिसकी मृत्यु नहीं है वह रण क्षेत्र में भी बचता है और जब मृत्यु समय आ-जाता है तो सुख शांति पूर्ण घरमें भी नहीं बचता। घरमें जब काल आकर ग्रसता है तो कौन बचालेता है। इसलिये युद्धके लिये जा-ते हुए किसी को मोह करना या सांसारिक सुखों की बासना मनमें रखना उचित नहीं है इसलिये किस वस्तुमें ध्यान न रखकर शांति पूर्वक युद्धके लिये पधारिये, और अपने स्वामी (महाराणा जी) का कार्य निश्चततासे करिए आयु होगी और ईश्वरेच्छा से रणमें विजय मिलेगी तो जीते हुए संसार में हम सब को

सुख प्राप्त होगा और कदाचित जो युद्धमें काम आये तो पीछे जो स्त्रीका कर्त्तव्य है उसे मैं भली भांति समझे हुए हूं। रणक्षेत्र में मृत्यु मिलने पर अनन्त काल पर्यन्त स्वर्ग में दाम्पत्य सुख भोगेंगे। सो हे प्राणनाथ! सहर्ष रणक्षेत्र में पधारिये और जय पाये बिना न आइये। हम दोनों की भेंट स्वर्ग में होवेगी ही। आप अपने कुल के योग्य सुयशको रणमें प्राप्त कीजिये। और पीछे क्षत्राणी को अपना धर्म किस तरह पालना चाहिये यह मुझे ज्ञात है मैं आपके पीछे अपने धर्म पालने में किसी बातकी त्रुटि और विलम्ब न करूंगी।

इस भांति बातें होते २ हाड़ी रानी से चूड़वत विदा होने को ही थे कि रानीने कहा 'महाराज! विजय पाकर शीघ्र लौटना आप

अपने कुलका धर्म जानते हैं इसलिये विजय कामना से यद्ध में प्रवृत्ति हूजिये। और दूसरी किसी बात में मन न रखकर रणक्षेत्र में केवल शत्रुके संहार करने में ध्यान लगाइये'।

चूडावत बोले हाड़ीजी जय पाकर पीछे लौटने की तो आशाही नहीं है, मरना तो निश्चयही है,। शत्रुको पीठ दिखाकर जात आन भी धिक्कार है। इसलिये हमारी और तुम्हारी यह अन्तिम भेंट है तुम समझदार हो इसलिये अपनी लाज रखना, और हम रण में काम आजावेंगे तो पीछे अपनी प्रतिष्ठा का रक्षा करना हाड़ीजीने उत्तर दिया "महाराज ! आप मेरी ओरसे तो निश्चिंत रहिए। आप अपना धर्म पूरा करें और मैं अपने धर्म में न रुकूंगी, यह बात आप पत्थरकी लकीर समझें' इस प्रकार

विश्वास दिलाने पर भी चूड़ावतजी को विश्वास न हुआ और यही दुविधा रही कि जाने मेरे मरने के पीछे हाड़ीजी सती होगी कि नहीं चूड़ावतजी का दृढ़ विश्वास था कि यदि मैं रणभूमि में माराजाऊं और हाड़ीजी मेरे साथ सती होजावें तो स्वर्ग में जाकर निरन्तर सुख भोगूंगा। उनके हृदय में यहीं सन्देह जमा हुआ था कि संसार सुख का अनुभव न करनेवाली तरुणावस्था की हमारी रानी न जाने सती होगी या नहीं। रानी को समझा बुझाकर चूड़ावत चलदिये परन्तु सीड़ियों से उतरते २ फिर रानी जी से कहा कि हम तो जाते है तुम अपना धर्म न भूल जाना। फिर जब चौक में पहुचे और युद्ध का धौंसा बजवाकर प्रस्थान करने लगे तो निजका एक सेवक हाड़ीजीकी सेवा में भेजा उस

है कि समय बहुत थोड़ा रहा है और हम जल्दी में यथेष्ट युद्ध प्रबन्ध कर सकेंगे इस लिये यदि बादशाह की सेना अधिक हुई तो घोर युद्ध होने पर हम सब मारे जावेंगे। और इस तरह से राठौरनी जी का मनोरथ सिद्ध न हो सकेगा और अन्त में उन को आतमघात करना ही पड़ेगा। शूरवीर चूड़ावत सरदार ने उत्तर दिया कि आप थोड़े से मनुष्यों को साथ लेकर रूप-नगर राजकुमारी को ब्याहने पधारें और मैं पहुंचने से पहले ही बादशाह की सेना को मार्ग में ही रोकता हूं। और इस सेना को मैं उस समय तक रोके रहूंगा जब तक आप राठौरनी राजकुमारी का पाणिग्रहण कर के उदयपुर को न लौट आवेंगे। महाराणा जी ने इस उदार सम्मति के लिये उन की बड़ी प्रशंसा की

ड़ावत जी के पास पहुंचा और उन्हें रानीका सिर सौंप कर उनका सारा कथन उनको सुना दिया यह देखकर चूड़ावत आनन्द मग्न होगये।

केतू बाई।

यह बूंदी के रावनारायण दास हाड़ाकी रानी थी रावनारायण दास बड़े वीर पराक्रमी और बलवान् पुरुष थे इनके वीरत्व व विक्रम की बहुतसी अख्यायिकायें राजपूताने में कही जाती हैं परन्तु जहां इनमें अनेक प्रशंसनीय गुण थे वहां इनमें अफीम सेवन का बड़ा दुर्गुण था कहा जाताहै कि वे सात पैसे भर अफीम नित्य खाया करते थे।

संवत् १८५१ में मांडू के पठानोंने चि- तौड़ के राना राय मल्लपर चढ़ाई की तो राव

नारायाण दास को उन्होंने अपनी सहायता के वास्ते बुलाया । नारायणदास ५०० वीर हाड़ाओं को साथ लेकर चितौड़ को चले एक मंजिल चलकर मार्ग में एक गांव में कुए के निकट अमल पानी लेकर पेड़ के नीचे लेटगये सफ़र की थकावट से तत्काल उनको निद्रा आगई उनका मुख खुला हुआ था जिसमें कुछ मक्खियां भर गई एक तेलिन उसी समय पानी भरने के लिये आई जिसने रावजी के चितौड़ जाने का हाल सुनकर कहा कि 'क्या हमारे राणा जी को इस के सिवाय और कोई सहायता के लिये नहीं मिला । भला जब इसे अपने शरीर की ही सुधि नहीं तो इससे राणा जी की क्या सहायता हो सकेगी । अमली की श्रवण शक्ति प्रबल होती है तेलिन का वाक्य सुन कर, आंखें मलते २

रावजी उठ खड़े हुये और उसके सन्मुख जाकर उससे कहा 'रांड क्या कहती है फिर तो कह' तेलिन डर के मारे उस बात को फिर न कह सकी, और क्षमा प्रार्थना करने लगी उस युवती के हाथ में एक लोह दंड था जिसको रावजीने उस के हाथ से लेकर और हँसली की तरह मेडा कर उसके गले में पहराकर कहा 'जब तक हम राणाजी को सहायता देकर लौट न आवें तब तक इसे पहिरे रहना यदि हमारे लौटने से पहिले कोई ऐसा बलिष्ठ आजाय जो इस को सीधा करके गले से उतार ले तो उससे उतरवा लेना जिस समय हाड़ा राव चित्तौड़ पहुंचे तो उन्होंने यह देखकर कि चित्तौड़ को शत्रुओंने चारों ओर से घेर रक्खा है एकाएक सिंह विक्रम से उन पर आक्रमण किया। हाड़ाओं की तलवार

के सन्मुख मुसलमान ठहर न सके अनेक मुसल-
मान वहीं मारेगये और अनेक इधर उधर भाग
गये तब बूंदी राव का विजय नकारा बड़े जोर
से बजा जब राणा रायमल जी ने सुना कि शत्रु
गण बूंदीराव के भीषण आक्रमण से चितौड़
छोड़कर भाग गये और बूंदीराव निकट आगये
हैं तो अपने सर्दारों सहित गढ़ के द्वार के बाहर
आ अभ्यार्थना पूर्वक राजप्रसाद में लिवा लेगये
चित्तौड़ में प्रविष्ट होने पर रमणीगणने जातीय
गीतों का गान किया और उनके ऊपर पुष्प
वृष्टि की ।

हाड़ाराव की अप्रतिम वीरता का वृत्तांत
सुनकर राजकुमारी केतूबाई उनके गुणों पर
ऐसी मोहित होगई कि उनके साथ विवाह करने
की इच्छुक हुई।

यह राजकुमारी राणाजी की भतीजी थी। राणा जी ने जब इस राजकुमारी का मनोभाव जाना तो अतिशय आल्हादित होकर उसका विवाह हाड़ाराव के साथ करदिया।

विवाह होने के पश्चात् हाड़राव अपनी नवोढा रानी के साथ सानन्द अपनी राजधानी को लौटे मार्ग में उसने तेलिन की हँसली उतारते हुये सकुशल बूंदी पहुंचे।

केतूबाई में पतिभक्ति और पतिप्रेम असाधारण था। एक रात्रि को हाड़ाराव अफीम की पीनक में राणी के मुख को अपना मुख समझकर नाखूनों से खुजाते रहे और खुजाते खुजाते २ घायल करडाला। परन्तु धैर्यवती रानी पतिको ऐसा करने से निषेध करने में पति का अपमान समझ चुपचाप रही जब प्रातःकाल

झाड़ारावने अपनी रानी के मुख को क्षत विक्षत
देखा और रानी से उनकी इस दशा का वृत्तान्त
सुना तो बड़े लज्जित हुये और अफीम की डि-
बिया रानी के हाथ में देकर कहने लगे कि आज
से तुम उचित मात्रामें अफीम दिया करो रानी
ने इसबातमें अपने पतिका हित समझकर सहर्ष
इस बात को स्वीकार किया। रानी बड़ी साव-
धानी से नियत समय पर अपने स्वामी को अ-
फीम दिया करती थी। और कुछ २ घटाती
भी जाती थी।

राव नारायणदास को नियमबद्ध होकर
अपनी रानी के हाथ से अफीम सेवन करने में
कष्ट तो बहुत होता था परन्तु अपने प्रणपर
दृढ़रहे और उनकी चतुर रानीने भी धीरे धीरे
उनकी अफीम छुटवा दी।

राव नारायणदास और केतूबाई का जीवन बिवाहके पश्चात् बड़े आनन्द के साथ व्यतीत हुआ। यथासमय एक पुत्र उत्पन्न हुआ और नाम सूरजमल रक्खागया बड़े होनेपर सूरजमल भी वीरता और पराक्रममें अपने बाप के समान प्रसिद्ध हुये ! इनकी भुजा अजानुलम्बी थी ये भी चित्तौड़ में व्याहे थे और इनकी बहिन सूजा बाई राणा चित्तौड़ को व्याही गई थीं एकबार राव सूरजमल चितौड़के दरबार में बैठेहुये ऊंघ रहे थे कि एक पुर्विया सरदार ने उपहास की रीति से एक घासका तिनका उनके कान में प्रविष्ट किया टाडसाहब लिखते हैं कि यह निर्बुद्धि सरदार सूरजमल को छेड़ने की अपेछा किसी सिंहको छेड़ता तो उसके लिये अच्छा होता। सूरजमल ने कान में तिनके के प्रविष्ट होतेही

एक हाथ खांड़े का छेड़ने वाले पुर्विया के दिया जिसमें तत्काल वह मरकर फर्श पर गिरा।

पुर्बिया सरदार का वेटा वदला लेने की घात में रहा और उसने चालाकी से राणा जी को विश्वास करादिया कि राव सूरजमल केवल अपनी वहिन से मिलने ही नहीं आते। एक दिन राणा और राव दोनों एक थाल में भोजन कर रहे थे और सूजाबाई बैठीहुई पंखा झल रही थी कि इसके भाई ने सिंह की भांति भोजन किया है और इसके पति ने बालक की भांति इस पर राणाको क्रोध तो आया परन्तु अपने स्थान पर अपने बहनोई का बध करना उचित न समझा। राणा ने बिदा होते समय राव से कहा कि मैं बसन्त ऋतु आखेट के लिये बूंदी आऊंगा। निदान वसन्त के आगमन पर वस-

न्ती वस्त्र धारणकर राणा अपने सरदारों स-
हित बूंदी पहुंचे । राणा और राव जब जंगल
में मृगया के लिये पहुंचे तो राणा के संकेतानुसार
पूर्वोक्त पुर्विया सरदारने राव सूरजमल की ओर
तीर चलाया । रावने उस को संयोग वश अपनी
ओर आता हुआ समझकर अपनी कमान से
दूसरी ओर फेर दिया दूसरा तीर जो राना
के खवासजाद भाई नेचलाया उसको भी
रावने फेरदिया । अब रावको उनकी ओर से
सन्देह हुआ । इतने में अश्वारूढ़ राणा उनकी
तरफ आये और खड्गाघात किया । राव
धराशायी हुए परन्तु रूमाल से अपना घाव
बांध कर उठे और उच्च स्वर से पुकार कर
कहा कि " तुम भागजाओ परन्तु मेवाड़ को
तुमने कलंकित कर दिया, । वह पुर्विया राणा

से बोला कि घाव पूरा नहीं आया। यह सुन कर राणा लौटे और राव पर फिर आक्रमण किया जब कि राणा ने शस्त्राघात करने को हाथ उठाया तो हाड़ाराव ने घायल शेर की भांति बड़े क्रोध से उनका कपड़ा पकड़ कर घोड़े से नीचे गिरा लिया और एक हाथ से उनका कण्ठ दबाया और दूसरे हाथ से खांडा लेकर उनके हृदय में घुसेड़ दिया शूरवीर राव अपने बधकर्ता को अपने पावों तले मरता हुआ देख कर सन्तुष्ट हुए और तत्काल ही आप भी मृत्यु को प्राप्त हुए।

टाड साहब ने लिखा है कि जब उनकी माता केतूबाई के समीप बूंदी में समाचार पहुंचा कि उनका पुत्र स्थान अहेरा में बध हुआ तो उन्होंने कहा "हैं, बध हुआ! और अकेला जिस

पुत्र ने मेरी छाती का दूध पिया है वह अकेला परलोक गत हो! ऐसा हो नहीं सक्ता वह अवश्य शत्रु को साथ लेकर परलोक को गया होगा" यह पूरा वाक्य उन के मुख से निकल भी न पाया था कि मातृउत्तेजना से उसके स्तनों से दुग्धधारा इस जोर से निकली कि जिस पाषाण की चौकी पर गिरी उसको तोड़ दिया। ऊपर लिखित वाक्य के मुख से निकलते ही दूसरे दूत ने समाचार दिया कि 'राव अपने प्रतियोगी राणा को अपूर्व साहस के साथ मारकर मरे हैं'। वीर माता को इस समाचार से संतोष हुआ।

राव और राणा जहां मृत्यु को प्राप्त हुए थे वहां दोनों की रानियां सती होने को गईं। चिता तैयार हुई और सूजाबाई अपने वे सोचे

समझ कथन के लिये पश्चाताप करती हुई अग्नि में भस्मीभूत होकर सती हुई। राणा की बहिन रावके साथ सती हुई दोनों सतिओं की छत्रियां अभी तक उस जंगल में बनी हुई इस अविचार और अन्याय सूचक घटना का स्म-रण दिला रही हैं।

साहब कुंवरि

पंजाब में पटियाला की रियासत जम्बू कश्मीर के सिवाय सब से बड़ी रियासत है। इसके रईस को सत्रह तोपों की सलामी है। और पंजाब के राजा महाराजाओं के दरबार में इनकी दूसरी बैठक है।

इसी रियासत के एक राजा साहब सिंह हो चुके हैं इनमें राज्यशासन करने की योग्यता

न थी परन्तु इन की बहिन साहब कुंवरि बड़ी योग्य और चतुर थीं। अपने भाई में राज्य प्रबन्ध कीअयोग्यता देखकर अपने पति सरदार जयमलसिंह (जोकि वारिद्वाब के एक बड़े भाग के अधिकारी थे) की आज्ञा से पटियाले में रह कर रियासत का प्रबन्ध भार इन्होंने अपने शिर पर लिया। रानी साहब कुंवरि के सुप्रबन्ध से राज्य की दशा बहुत सुधरी। सब प्रकार से राज्य की उन्नति हुई और प्रजा सुख शांति से जीवन निर्वाह करती थी।

साहब कुंवरि किसी गुण में पुरुषों से कम न थीं। उन में जैसी राज्य प्रबन्ध की योग्यता थी काम पड़ने पर उन्होंने वैसी ही युद्ध कुश-लता और वीरता का भी परिचय दिया। एक बार जयमलसिंह को उसके चचेरे भाई फतह-

सिंह ने कैद कर लिया और उनके सारे इलाके पर अधिकार कर लिया। रानी कुंवरिसाहब ने जब यह बात सुनी तो आप सेना लेकर फतहगढ़ पहुंची और लड़कर फतहसिंह को परास्त किया और अपने पति को छुड़ाकर उनके इलाके पर फिर उनका अधिकार कराया।

सन् १७९४ में मरहठों की सेना ने पटियाले पर आक्रमण किया कई एक सिक्ख सरदारों को आधीन करके रियासत पटियाला को भी आधीन होने का समाचार भेजा। मरहठे समझते थे कि जब रियासत पटियाला का राज्य प्रबन्ध एक स्त्री के हाथ में है तो उसका आधीन होना क्या कठिन है परन्तु यहां की तो कुछ दशाही और थी, रानी साहब कुंवरि का हृदय आधीनता का संवाद सुनते ही क्रोधाग्नि से दग्ध हो-

गया। उन्होंने तत्काल युद्ध की तैयारी की और सात हजार सेना मरहठों से लड़ने को भेजी अम्बाले के समीप मरदानपुर के मैदान में लड़ाई हुई। उस समय मरहठे वीरता पराक्रम और युद्ध निपुणता में एक ही थे। पटियाले की सिक्ख सेना उस समय युद्ध कला से अनजान थी इसलिये लड़ाकि मरहठों के सामने सिक्खों का ठहरना कठिन होगया, जब यह समाचार रानी साहब कुंवरि ने सुना तो आप युद्धक्षेत्र में आई। पटियाले की सेना पीठ दिखाने ही को थी कि रानी तलवार हाथ में लेकर रथ में से कूद पड़ी और अपनी सेना से कहने लगी 'पटियाले के योद्धाओ! युद्ध में पीठ दिखाना बड़ी कायरता की बात है। ऐसी कायरता से युद्ध में मारे जाने के भय से यदि भागजाओगे

तो क्या फिर कभी न मरोगे। जब एक न एक दिन मरनाही है तो फिर वीरों की भांति लड़कर क्यों न मरो जिससे तुम्हारी सब प्रशंसा करें। मै शरीर में प्राण रहने तक लड़ने के लिये कटिबद्ध हूं। मैं युद्धभूमि से एक पग पीछे न हटूंगी। यदि तुम्हारे भाग जाने पर पर मैं मारीगई तो तुम्हारी कितनी अप्रतिष्ठा होगी तुम कहीं मुख दिखाने योग्य न रहोगे मैं तुम्हारे राजा की बहिन होने से तुम्हारी भी बहिन हूं आओ युद्ध में अपनी बाहिन साथ दो।

रानी का यह उत्तेजना पूर्ण कथन सुनकर प्रत्येक सैनिकने दृढ़ प्रतिज्ञा की कि मरजावेंगे परन्तु युद्धभूमि से न हटेंगे। घोरयुद्ध हुआ सिक्खों की सेना बहुत मारी गई। प-

रन्तु फिर भी बाकी योध्दे वीरता पूर्वक लड़ते रहे। रानी की दृढ़ता को देख कर कोई युध्द से न हटा। जब रात हुई तो कुछ लोगों ने सम्मति दी कि अब सेना थोड़ी रहगई है और इस स्वल्प सेना से विजय प्राप्त करना असम्भव है इसलिये पटियाला चलकर और आदमियों का प्रबन्ध करो। रानी नेइन लोगों की सम्मति न मानी किन्तु कहा कि इस सेना से रात के समय मरहठों पर धावा करो और प्राणपण से लड़ो। निदान सिक्खों ने मरहठों पर प्रबल वेग से आक्रमण किया जिससे मरहठे व्याकुल होगये और इसलिये जीत सिक्खों की ही हुई।

सन् १७९९ में राजा नाहन की प्रजा ने विद्रोह किया रानी अपनी थोड़ी सी सेना लेकर नाहन पहुंची और तीन महीने तक वहां

रह कर विद्रोहियों को भली भांति दमन किया। नाहन ने रानी के वीरता की प्रशंसा की और चलते समय बहुमूल्य उपायन भेंट किये।

सन् १७९८ जार्ज टाम्स नामक फ्रांसीसी हांसी हिसार पर अधिकार करता हुआ बहुत सी पैदल सेना एकहजार सवार और पचास तोपें लेकर सिक्ख रियासतों दी ओर जबकि सिक्ख सरदार लाहौर गये हुये थे तो इसनें जींद को घेरलिया। सब सिक्ख सरदारों की फौजें टामसकी सेना पर चढ़ी परन्तु सफलता प्राप्त न हुई अन्तमें रानी कुंवर अपने वीर सैनिकों को लेकर युद्धभूमि में पहुंची और विकट युद्ध हुआ। टामसकी सेना व्याकुल होगई इसलिये टामसको बेवश होकर अपनी सेना को झेलम की ओर हटाना पड़ा दूसरी

सिक्ख सेनाओं ने टामस को पीछे हटता देखा तो उसका पीछा किया। टामस की सेना ने लौटकर सिक्खों की सेना पर लौटकर गोलों की ऐसी वर्षा की कि सिक्ख सेना विकल होकर इधर उधर भाग गई। इस पराजय से सिक्ख ऐसे साहस हीन हो गये कि उनको टामस से संन्धि करनी पड़ी। इस पीछा करने वाली सिक्ख सेना में रानी साहब कुंव-रिकी सेना सम्मिलित न थी।

इस युद्ध के पश्चात रानी साहब कूंवरि पटियाले चली आईं और जब रियासत के लिये किसी बाहरी शत्रु का भय न रहा तो राजा साहब सिंह के स्वार्थी मुसाहबोंने राजा को बहकाया और रानी साहब के विरुद्ध राजा के ऐसे कान भरे कि वह अपनी

बहिन के सब उपकार भूलगया और उसपर मिथ्या दोषारोपणकर प्रसिद्ध किया कि मुझ को साहब कुंवरि से अपने प्राण का भय है। रानी साहब कुंवरिने जब यह दशा देखी कि मेरे भाई का चित्त मेरी ओर से इतना फिरगया तो वह अपनी जागीर में जाकर रहने लगीं और वहां एक सुदृढ़ दुर्ग बनवाया। राजाने वहां भी रानी को न रहने दिया आज्ञा दी कि किलेको खाली करके अपने पति के पास चली जाओ। रानी अपने पतिके पास तो जाना चाहती ही थीं परन्तु अप्रतिष्ठाके साथ किला खाली करना उनको स्वीकार न था इसलिये उन्होंने पटियाला जानेका वि-चार किया। मार्ग में एक विश्वासपात्र मनुष्य ने समझाया कि राजा का चित्त डावांडोल

होरहा है। ऐसी दशा में पटियाला जाना ठीक नहीं। रानी फिर किले में आगई राजा ने क्रोधमें आकर रानी से लड़ने की तय्यारी की परन्तु मन्त्रियोंने सम्मति दी कि लड़ाई में रानी से न जीतोगे इसलिये समझा बुझा-कर रानीसे मेल किया और कहा कि पटियाले में आपकी पहलेकी भांति मानमर्य्यादा का विचार रक्खा जावेगा जब रानी अपने भाई की बातों में आगई तो वह ढोंधनके किले में कैद करके रक्खी गई। वहां बहुत समय तक कैद रहने के पीछे एक दिन अपने नौकर के वेश में बाहर निकल गई और भेररयां में जाकर रहने लगीं। वहां रानी के शुभचिंतक नौकरों के भय से फिर राजा ने कुछ छेड़छाड़ न की रानी जब तक जीवित रहीं अपनी जा-

गीर का प्रबन्ध करती रहीं और रियासत पटियाले से कुछ सम्बन्ध न रक्खा। रानी बड़ी पतिपरायणा थीं परन्तु पति व पत्नी एक साथ बहुत कम रहे। सन् १९१४ ई० में रानी साहब कुंवरि मृत्यु को प्राप्त हुईं। रानी की मृत्युपर सारे पटियालेकी रियासत में शोक छागया। कहा जाताहै कि भाई के अपव्यवहार से रानी के हृदय में ऐसा शोकाघात पहुंचा था कि उससे वह अधिक जीवित न रहसकीं। अपनी बहिनकी मृत्युपर राजा साहब सिंहको भी बड़ा शोक हुआ और अपनी कृतघ्नता पर बड़ा पश्चात्ताप हुआ। अब उन्हें अपनी बहिन के सब गुण और उपकार याद आने लगे परन्तु अब पश्चात्ताप करने से क्या हो सक्ता था।

सिन्धु देशकी रानी

सन् ७१८ ई० में अरबके मुसलमानों की सेनाने सिन्धु पर चढ़ाई की। सिन्धु देश के अधिपति राजा दाहिरने अपने ज्येष्ठ राजकुमार को मुसल्मानों की लड़ाई रोकने के लिये भेजा। मुसल्मान सेना का अध्यक्ष मुहम्मद बिन कासिम अपने शौर्यवीर्यका परिचय देता हुआ अपूर्व वीरता के साथ अपनी सेना को लड़ाने लगा निदान प्रचंड युद्ध में सिंधु राजकुमार को परास्त करके यवन सेना राजधानी की ओर अग्रसर हुई सिंधु राज ने जब यह समाचार सुना तो अपनी और अपने सहायक राजाओं की सेना की राय लेकर मुसल्मान सेना के सन्मुख लड़ने आये। भीषण युद्ध आरम्भ हुआ। कुछ काल

पश्चात् एक गोलासे राजाका हाथी घायल हुआ हाँथी चिंघाड़कर युद्धक्षेत्र से दूर भाग गया राजा के हाथी को भागते हुए देखकर राजपूत सेना निरुत्साहित हुई। राजा आप भी बहुत व्याकुल होगये थे परन्तु फिर भी अश्वारूढ़ होकर रण क्षेत्र में आये और धैर्य पूर्वक युद्ध करने लगे। परन्तु विजयलक्ष्मी कुछ भी राजा पर प्रसन्न न हुई। वह खड्ग लेकर शत्रु सेना से लड़ते२ मारे गये। यवन सेना उत्साह के साथ राजधानी की ओर बढ़ी परन्तु राजा के स्थान में अब उनकी रानी ने सेना की अध्यक्षता ग्रहण की रानी अपनी सेना को उत्साहित करती हुई लड़ाने को उद्यत हुई वह वीरतापूर्वक शत्रु सेना में लड़ने को दृढ़ प्रतिज्ञ हुई। अपनी सेना को पराक्रम दिखाने के लिये उत्तेजित करने लगी

उन्होंने कहा कि 'क्षत्रियों को युद्ध में पराक्रम दिखाने वीरता पूर्वक लड़ कर स्वर्ग प्राप्त करने का अवसर सौभाग्य से मिलता है। क्षत्रियों के लिये आज बड़े सौभाग्य का दिन है इस लिये उत्साह से लड़ो। यदि आप लोगों की विजय हुई तो आपका यश विस्तृत होगा आप का दाहिर राज्य स्थिर रहेगा नहीं तो वीरता पूर्वक लड़ने और पराक्रम दिखा कर मारे जाने से आप का नाम अमर होगा आप के दाहिर अंश की चिरकाल तक यश पताका फहराती रहेगी और आप को स्वर्ग सुख प्राप्त होगा कौन ऐसा कायर मनुष्य होगा जो रानी के इस वीरावेश से उपदेश करने पर शत्रु सेना से वीरता पूर्वक युद्ध करने में त्रुटि करता। निदान राजा की मृत्यु पर कहां तो यवन सेनापति ने सहज

से राजधानी को लेलेने का विचार किया था, और प्रबलतर बिघ्न समुपस्थित हुआ। बिधवा राजमहिषी ने अतीव तेज से मुहम्मद बिन-कासिम के विरुद्ध अस्त्र धारण किया। उनके तेज से पराजित सिन्धु सेना फिर से उत्साह पूर्वक युद्ध करके राजधानी की रक्षा में कटि-बद्ध हुई वीर रमणी बद्ध हुई वीर रमणी के अपूर्व वीरत्व से शत्रु सेना की गति अवरुद्ध हुई।

सेनापति ने कोई उपाय न देख कर नगर को घेर लिया और गमनागमन बन्द कर दिया निदान अन्नाभाव होने पर भी वीर राजमहिषी स्वसंकल्प पर दृढ़ रही। सिन्धु राजमहिषी और उसके अनुवर्त्ती राजपूतों की वीर कीर्त्ति इतिहास के पृष्ठों पर सुवर्णाक्षरों से चिरकाल तक लिखे रहने के योग्य है।

पुस्तक मिलने का पता—

श्यामलाल वर्म्मा

आर्य्य पुस्तकालय बरेली

पुस्तक मिलने का पता—

श्यामलाल वर्म्मा

आर्य्य पुस्तकालय बरेली

बगैर इजाजत कोई महाशय न छापें